RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-09
September-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

अर्थशास्त्र का रचनाकाल एवं कौटिल्य राज्य व्यवस्था

अनिल कुमार मिश्रा

असिस्टेंट प्रोफेसर, पोलिटिकल साइंस, गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज, हरपुर निहस्था, रायबरेली (भारत)

सामान्य विज्ञान की प्रगति से उन्मादित अपेक्षाकृत नवोदित यूरोपीय राज्य अपनी श्रेष्ठता को मानवशास्त्र के सभी क्षेत्रों में भूत, वर्तमान और भविष्य कालो के लिये मान्य बनाने का प्रयास करते रहे हैं। इनका एकमात्र कथन रहा है कि पौर्वात्य साम्राज्य प्रधानतः कर'संचय करने वाली संस्थाएं थीं, उन्होंने अपनी अधिकारयामी सत्ता का प्रयोग अपनी जनता पर अति हिंसात्मक ढंग से किया किन्तु विशिष्ठ तथा कर–संचय के निदेश से भिन्न विधि का क्रियान्वयन उन्होंने कभी नहीं किया।

वस्तुतः यूनान में जिस मसय राजनीतिशास्त्र के जनक कहे जाने वाले अरस्तू अपनी कृति 'पालिटिक्स' में अपने राजनीति सम्बन्धी ज्ञान को आगे आने वाली पीढ़ियों के लिये लेखबद्ध कर रहे थे, लगभग उसी समय भारतीय राजनीतिक दर्शन के अधिष्ठाता कौटिल्य विशाल मौर्य साम्राज्य के महामंत्री के रूप में प्राप्त अपने व्यावहारिक राजनीतिक ज्ञान को अपनी अमर कृति 'अर्थशास्त्र' में कदाचित् इसलिये सूत्रबद्ध कर रहे थे कि आगे आने वाले युग में भारतीयों पर यह दोष न लगया जा सके कि वे कोरे आध्यात्मवादी हैं तथा राजनीतिशास्त्र सम्बन्धी विचारों के संसार में उनका कोई मौलिक अनुदाय नहीं है।

आचार्य कौटिल्य का महान व्यक्तित्व उत्कृष्ट राजनीतिज्ञ के रूप में मौर्य साम्राज्य के यश के साथ भारत के राजनीतिक इतिहास में अपनी प्रतिष्ठा को बनाये है तो वहीं दूसरी ओर वह अपनी अतुलनीय अद्भुत कृति ''अर्थशास्त्र'' के कारण गौरव प्राप्त करते हैं। कौटिल्य इन्हीं आसामन्य गुणों के कारण पुराणों से लेकर काव्य, नाटक और कोश ग्रन्थों में सर्वत्र उनके नाम के माहात्म्य की कथायें व्याप्त हैं।

अर्थशास्त्र को आज भी विश्व का अति महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। साम्राज्य का प्रभावी व्यवस्था, राज्य का कुशल संचालन, गुप्तचर, एवं सन्धि–विग्रह के प्रावधान आदि अन्नोन्य तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए कौटिल्य ने हिमालय सदृश भारतीय ऋषि परम्परा को अक्षुण्झा बनाये रखा। वे लोभ–मोह एवं भैतिक सुविधाओं से अनाशक्त रहे। लोक–मगल में निरत जनसेवकों को निर्वाह न्यूनतम स्तर का ही होना चाहिए, इस आदर्श को उन्होंने अपनी दैनिक क्रियाविधि में व्यवहृत किया।

कौटिल्य के अन्य अनेक नामों का उल्लेख किया गया है, जिसमें चाणक्य नाम प्रसिद्ध है। कौटिल्य को चाणक्य के नाम से पुकारने वाले विद्वानों का मत है कि चणक का पुत्र होने कारण वह चाणक्य कहलाया। दूसरी ओर कुछ विद्वानों के कथनासुार उसका जन्म पंजाब के चणक क्षेत्र में हुआ था, इसलिये उसे चाणक्य कहा गया है।, यद्यपि इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है। परन्तु यह सर्वमान्य है कि कौटिल्य और चाणक्य एक ही व्यक्ति के नाम है।

भारतीय इतिहास के उदीयमान नक्षत्र और मौर्यवंश के प्रतापी सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य, ने चाणक्य की अद्भुत कुटिल नीति जिसका नाम विष्णु गुप्त भी था, की सहायता से मगध के नदवंश को नष्ट कर वैभवयुक्त सिकन्दर के सम्पूर्ण प्रयत्नों को विफल कर लगभग 321 ई0पू0 में एक विराट–साम्राज्य की स्थापना की जिसे मौर्य साम्राज्य के नाम से पुकारा गया। इसका शासन लगभग 24 वर्ष तक मगध की राजगद्दी पर एकक्षत्र के रूप में विद्यमान रहा। चन्द्रगुप्त मौर्य असाधारण दिग्विजयी सम्राट हुआ जिसने अपने राज्यकाल में धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और बौद्धिक उन्नति के लिये निरन्तर प्रयत्न किया।

कुछ विद्वानों ने कहा है कि कौटिल्य ने कहीं भी अपनी रचना में मौर्यवंश या अपने मंत्रित्व के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा है, परन्तु अधिकांश स्रोतों ने इस तथ्य की संपुष्टि की है। 'अर्थशास्त्र' में कौटिल्य ने जिस विजिगीषु राजा का चित्रण प्रस्तुत किया है, निश्चित रूप से वह चन्द्रगुप्त मौर्य के लिये ही सम्बोधित किया गया है।

अर्थशास्त्र की परिभाषा

कौटिल्य ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'अर्थशास्त्र' में अर्थ एवं अर्थशास्त्र की परिभाषा की है। वह मनुष्य की वृत्ति अथवा जीविका को अर्थ मानते हैं। मनुष्यों वाली भूमि को भी उन्होंने अर्थ ही माना है। वह उस शास्त्र को अर्थशास्त्र मानते है जिसमें मनुष्यों वाली भूमि के लाभ और उसके पालन करने और उपायों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार मनुष्यवती भूमि के प्राप्त करने और उस भूमि के निवासियों के सम्यक् प्रकार से पालन–पोषण करने के उपायों का बोध कराने वाला ज्ञान अर्थशास्त्र है।

कौटिल्य के प्रस्तुत अर्थशास्त्र में ऐसे संकेत किये गये है जिनके आधार पर ज्ञात होता है कि कौटिल्य अर्थशास्त्र के

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

रचयिता थे। यह वही कौटिल्य हैं जिन्होंने राजा चन्द्रगुप्त मौर्य के निमित्त समस्त शास्त्रों का अध्ययन कर और लोक प्रचलित अनेक प्रकार के लेखों पर मनन कर राजकीय आदेशों के लिखने की अनेक प्रणालियों को निर्धारित किया था। उन्हीं ने अर्थशास्त्र सम्बन्धी बिखरी हुई सामग्री को ग्रहीत कर प्रस्तुत सरल और सुबोध अर्थशास्त्र की रचना की है। यह कौटिल्य वही व्यक्ति है, जिन्होंने क्रोध के कारण नन्दवंशीय राजा से शास्त्र, शस्त्र, और भूमि का उद्धार किया है, और इस अर्थशास्त्र की रचना की है।

पाश्चात्य विद्वान जॉली, कीथ और विन्टरनित्ज का यह मत है कि 'अर्थशास्त्र' कौटिल्य की सूक्तियों एवं विचारों का संकलन है जो बाद में शिष्यों द्वारा संकलित किया गया, इसलिये यह बाद की तिथि की रचना है। इनके मतानुसार 'अर्थशास्त्र' वर्ष 300 ई0पू0 के पूर्व की रचना नहीं है। हिलब्राट का कथन है कि कौटिल्य सम्पूर्ण 'अर्थशास्त्र' का रचनाकार नहीं हो सकता है, उसके शिष्यों एवं अनुयायियों ने ही उसका संग्रह किया है। एक विदेशी विद्वान ई0एच0 जॉन्सन ने बौद्ध साहित्य का हवाला देते हुए कहा है कि अर्थशास्त्र का रचनाकाल वर्ष 150 ई0पू0 के पश्चात नहीं हो सकता है। आर0जे0 भंडारकर ने अर्थशास्त्र का संभावित रचनाकाल वर्ष 200 ई0पू0 बताया है।

कानून का अर्थ एवं उद्देश्य

कौटिल्य के पूर्व विभिन्न विद्वानों ने कानून की परिभाषा अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत की है, और उसके उद्देश्यों का भी विवरण प्रस्तुत किया है। हिन्दू ग्रन्थों के अनुसार कानून को सर्वोच्च और सर्वोपरि माना गया है। राजा को सर्वशक्तिशाली मानते हुए भी उसे कानून से ऊपर नहीं माना गया है। राजा के कार्यों और शक्तियों का स्रोत भी कानून को ही माना गया है। राजा की शक्तियों और कार्यों का उल्लेख करने वाले कानून को राजधर्म की संज्ञा दी गयी है। दूसरी ओर कुछ अन्य राज्यों में कानून को राजा के अधीन रखा गया है। उदाहरण के लिये 'रकम्बीसिस शासनकाल' में फारस में राजा अपने मनोनुकूल कानून को परिभाषित और उसकी व्याख्या कर सकता था।

न्याय की अवधारणा

कौटिल्य के अनुसार दंडनीति व्यक्ति के जीवन की सुरक्षा और निर्भयता के लिये आवश्यक है, कौटिल्य के अनुसार न्याय वितरण करना राजा का सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख कर्तव्य है, यह मानव कल्याण को सुनिश्चित करने वाले दार्शनिक तत्वों को भी सुरक्षित करता है। कौटिल्य ने न्याय में विवेक तत्व को प्रधानता दी है। इस संदर्भ में कुछ विद्वानों ने कौटिल्य के न्याय की अवधारणा की तुलना प्लेटो के न्याय की अवधारणा से की है। प्लेटो के न्याय सिद्धान्त में भी विवेक की प्रधानता पर बल दिया गया है। कौटिल्य अपराधियों में सुधार लाने तथा उनकी आपराधिक प्रवृत्तियों को दूर करने का पक्षधर था। उसने यह स्पष्ट संकेत दिया है कि राजा को सही और समुचित ढंग से न्याय वितरण का कार्य करना चाहिए।

कौटिल्य ने कानून, न्याय और न्याय व्यवस्था का वृहद एवं विशद् विवेचन किया है। कई समीक्षकों की दृष्टि में न्याय और कानून की दृष्टि से कौटिल्य का अर्थशास्त्र एक अनुपम और उल्लेखनीय कृति है। कौटिल्य द्वारा कानून और न्याय व्यवस्था का विश्लेषण व्यहारिक आधार पर किया गया है ।

कोष की उपयोगिता एवं महत्व

प्राचीन भारतीय राजशास्त्रियों के ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत में राजस्व की प्रशासन की एक सुदृढ़ व्यवस्था थी। किसी भी शासन के सुचारू संचालन के लिये समुचित एवं समृद्ध कोष की आवश्यकता होती है और कोष का प्रमुख स्रोत है राजस्व। अतः राजस्व के संग्रह, संचालन एवं वितरण के लिये समुचित एवं सुदृढ़ व्यवस्था की अनिवार्यता है।

भीष्म ने कोष को राज्य का आधार मानते हुए राज्य को कोष के संरक्षण एवं उचित संचालन के लिये आवश्यक निर्देश दिये हैं। मनु और याज्ञवल्क्य ने भी समुचित कोष–व्यवस्था पर बल दिया है।

राजस्व के स्रोत

प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में राजस्व के अनेक स्रोतों का उल्लेख किया गया है। जो इस प्रकार थे–

1. नियमित कर व शुल्क
2. आकस्मिक कर
3. राज्य की सम्पत्ति से आय
4. सामन्तों एवं जागीरदारों से उपहार
5. दण्ड एवं (जुर्माना)

महाभारत ग्रन्थों, अभिलेखों तथा शिलालेखों के अध्ययन से यह विदित होता है कि राज्य द्वारा निम्नलिखित प्रकार के कर लगाये एवं वसूल किये जाते थे–

1. भाग कर
2. भोग कर
3. शुल्क
4. विश्ती
5. उदरग तथा
6. ऊपरी कर

कोष–संचय के सिद्धान्त

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

कौटिल्य ने राजकोष की उपयोगिता एवं आवश्यकता पर बड़ा महत्व दिया है, परन्तु इसका तात्पर्य कदापि यह नहीं है कि राजा को राजकोष के निमित्त धन संग्रह करने में पूर्ण स्वतंत्रता दी गयी हो। कौटिल्य इस मत से असहमत है कि राजा को राजकोष के निमित्त इच्छानुसार प्रजा पर लगाकर संग्रहीत धन से कोष वृद्धि करनी चाहिए। राजा को ऐसा अधिकार दे देने से प्रजा पीड़ित होगी और इस प्रकार जिस उद्देश्य की पूर्ति हेतु राज्य अस्तित्व में आया है उसका ही मूलोच्छेद हो जायेगा। इसलिये विद्वान आचार्यों द्वारा निर्धारित सिद्धान्तों के आधार पर ही राजा के राजकोष के लिये धन संचय करना उचित माना है।

लोकतंत्रात्मक राज्य

कौटिल्य नृपतन्त्रात्मक राज्य के पोषक थे। उनके जीवन का उद्देश्य समस्त भारत में एक सशक्त एवं सम्पूर्ण राज्य का निर्माण करना था। वह लोकतंत्रात्मक राज्यों को श्रेष्ठ नहीं समझते थे। यही कारण है कि उन्होंने लोकतंत्रात्मक राज्य एवं उनकी सरकारों की उपेक्षा की है। परन्तु इतना होने पर भी उन्हें यह तो स्वीकार करना ही पड़ा है 'कि अर्थशास्त्र के रचनाकाल एवं उसके पूर्व भारत में कुछ ऐसे भी राज्य थे जिनमें लोकतंत्रात्मक सिद्धान्तों के आधार पर शासन कार्य सम्पादित होता था।'

यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने भी अपनी ''इण्डिका'' नाम की पुस्तिका में ऐसे उल्लेख किये हैं जिनसे ज्ञात होता है कि उसके समय में भारत में गणराज्य भी अस्तित्व में थे।

उपसंहार

''अर्थशास्त्र'' को यदि नीति और राजनीति का विश्वकोष कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। यद्यपि अर्थशास्त्र के अन्तर्गत अनेक विषयों की विवेचना की गयी है, किन्तु मुख्य रूप से यह राजनीति और शासनकला की वृहद् मीसासा है। अर्थशास्त्र में कुल पन्द्रह अधिकरण हैं।

प्राचीन भारतीय राजशस्त्रियों में कौटिल्य का अद्वितीय स्थान है। वास्तविकता यह है कि जिस समय यूनान में विद्वान अरस्तू का डंका बज रहा था और वे अपनी कृति ''पॉलिटिक्स'' में अपने राजनीति सम्बन्धी ज्ञान को आगे आने वाली पीढ़ियों के लिये लेखबद्ध कर रहे थे, लगभग उसी समय भारतीय राज्य दर्शन के अधिष्ठाता, प्रकाण्ड पण्डित आचार्य विष्णुगुप्त कौटिल्य अपने अनुभव के आधार पर विशाल साम्राज्य के महामंत्री के रूप में व्यावहारिक राजनीतिक ज्ञान का परिचय दे रहे थे। इसीलिए उनको कूटनीति तथा शासन कला का सबसे महान प्रतिपादक कहा जाता है। पाश्चात्य राजनीति में जो कार्य प्लेटो, अरस्तू, मैक्यिावैली और बेकन ने मिलकर किया, भारत में वह अकेले कौटिल्य ने सम्पादित किया। यहां तक कि उसके बाद राजनीतिक विचारचिन्तन के लिये कोई तथ्य छूटा हुआ प्रतीत नहीं हुआ।

कौटिल्य धर्म को राजनीति से पृथक ही नहीं करते अपितु राजनीति को धर्म से प्राथमिकता और सर्वोच्चता भी प्रदान करते हैं। कौटिल्य सभी विद्याओं की सिद्धि को दण्डनीति पर आधारित करता है। वह कहता कि ''सम्पूर्ण सांसारिक जीवन दण्डनीति पर आश्रित है।'' कौटिल्य यह भी लिखता है कि ''चरित्र तथा लोकाचार का धर्मशास्त्र के साथ जिस विषय में विरोध हो वहां धर्मशास्त्र को ही प्रमाण मानना चाहिए अर्थात् ऐसे अवसर पर धर्म के द्वारा ही निश्चय करना चाहिए। परन्तु यदि कहीं धर्मशास्त्र का धर्मानुकूल राजकीय शासन के साथ विरोध हो तो वहां राजकीय शासन को ही प्रमाण मानना चाहिए।'' स्पष्ट है कि कौटिल्य राजनीति को धर्म से सर्वोच्च स्थान प्रदान करता है।

कौटिल्य ने न केवल राजनीतिक विचारों का प्रतिपादन किया वरन् अपने व्यावहारिक कार्यों के आधार पर देश को एक सुदृढ़ व केन्द्रीकृत शासन प्रदान किया, जैसा कि उसके पूर्व भारतीयों ने कभी भी नहीं जाना था। उसने विशाल मौर्य साम्राज्य की स्थापना की और साम्राज्य के महामंत्री के रूप में अपने प्रशासनिक सिद्धान्तों को सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया। इस दृष्टि से कौटिल्य राजनीति का प्रकाण्ड पण्डित ही नहीं, वरन् भारत के महान पुत्र और भारतीय इतिहास के महान नायक के रूप हमारे सामने आता है।

References

1. Roger Boesche (2002). *The First Great Political Realist*: Kautilya and His Arthashastra. Lexington Books. p. 7.
2. Siva Kumar, N.; Rao, U. S. (April 1996). "Guidelines for value based management in Kautilya's Arthashastra". *Journal of Business Ethics*. 15 (4): 415–423.
3. Trautmann (1971, p. 10): "while in his character as author of an arthaśāstra he is generally referred to by his gotra name, *Kauṭilya*;"
4. RP Kangle (1969, Reprinted in 2010), Arthaśāstra, Part 3, Motilal Banarsidass
5. Arvind Sharma (1999), The Puruṣārthas: An Axiological Exploration of Hinduism, *The Journal of Religious Ethics*, Vol. 27, No. 2 (Summer, 1999), pp. 223-256
6. Kangle, R. P. (1969), *Kautilya Arthashastra, 3 vols*, Motilal Banarsidass

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

7. *Arthashastra-Studien*, Dieter Schlingloff, Wiener Zeitschrift für die Kunde Süd- und Ostasiens, vol. 11, 1967, 44-80
8. Torkel Brekke (2009), The Ethics of War in Asian Civilizations: A Comparative Perspective, Routledge page 128
9. K Thanawala (2014), Ancient Economic Thought (Editor: Betsy Price), Routledge, page 50
10. Thomas Trautmann (2012), Arthashastra: The Science of Wealth, Penguin, pages 121-127
11. Olivelle 2013, p. 101.
12. Olivelle 2013, pp. 140-142, 44-45.
13. Olivelle 2013, pp. 127-130.
14. Olivelle 2013, pp. 122-126, 130-135.
15. Olivelle 2013, pp. 139-140.
16. Olivelle 2013, pp. 140-141.
17. Olivelle 2013, pp. 142-143.

© RRIJM 2015, All Rights Reserved